विषय	हिन्दी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	P6: हिन्दी गद्य साहित्य : कथा साहित्य
इकाई सं. एवं शीर्षक	M18: हिन्दी आलोचना में *बाणभट्ट की आत्मकथा*
इकाई टैग	HND_P6_M18
प्रधान निरीक्षक	प्रो.रामबक्ष जाट
प्रश्नपत्र-संयोजक	प्रो. ए. अरविन्दाक्षन
इकाई-लेखक सह लेखक	डॉ.ओमप्रकाश सिंह डॉ. आनन्द पाण्डेय
प्रश्नपत्र समीक्षक	प्रो. गंगाप्रसाद विमल
भाषा सम्पादक	डॉ. आनन्द पाण्डेय

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. *बाणभट्ट की आत्मकथा* का शिल्प : उपन्यास की भारतीयता
4. *बाणभट्ट की आत्मकथा* की ऐतिहासिकता और सार्वकालिकता
5. *बाणभट्ट की आत्मकथा* की अन्तर्वस्तु और हिन्दी आलोचना
6. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरान्त आप -

- हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के स्वरूप के बारे में परिचित हो सकेंगे।
- *बाणभट्ट की आत्मकथा* की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- *बाणभट्ट की आत्मकथा* के शिल्प से परिचित हो पाएँगे।
- *बाणभट्ट की आत्मकथा* के बारे में विभिन्न आलोचकों के मत से परिचित हो सकेंगे ।

2. प्रस्तावना

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी के महत्त्वपूर्ण आलोचक, उपन्यासकार, निबन्ध लेखक और कवि हैं। तय है कि उनकी छवि एक आलोचक की ही अधिक है, लेकिन हम उनके उपन्यासकार और निबन्धकार व्यक्तित्व की अनदेखी नहीं कर सकते। द्विवेदीजी ने चार प्रसिद्ध उपन्यास लिखे हैं - *'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्रलेख', 'पुनर्नवा'* और *'अनामदास का पोथा'*। उपन्यासकार के रूप में द्विवेदीजी की अक्षय कीर्ति का आधार *बाणभट्ट की आत्मकथा* है। इसकी गणना हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ चार-पाँच उपन्यासों में होती है। वरिष्ठ आलोचक नामवर सिंह ने हिन्दी के पाँच कालजयी उपन्यासों में इस उपन्यास को चौथे नम्बर पर रखा है। उनके ही शब्दों में, "हिन्दी के पाँच कालजयी उपन्यास - *'गोदान', 'त्यागपत्र', 'शेखर : एक जीवनी', 'बाणभट्ट की आत्मकथा' और 'मैला आँचल'* हैं (साहित्य की पहचान, सं. आशीष त्रिपाठी, पृ.167)।" नलिन विलोचन शर्मा ने भी *बाणभट्ट की आत्मकथा* को हिन्दी के श्रेष्ठ उपन्यासों में गिना है। वे लिखते हैं, "अगर मुझे हिन्दी के दो-तीन उत्कृष्ट ऐतिहासिक उपन्यासों के नाम लेने को कहा जाए तो 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उनमें से एक जरूर होगी (नलिन विलोचन शर्मा : संकलित निबन्ध, सं. गोपेश्वर सिंह, पृ.192)।" शिवदान सिंह चौहान ने भी *बाणभट्ट की आत्मकथा* को हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास कहा है। (हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष, सं. विष्णुचन्द्र शर्मा, पृ.138)।" उल्लिखित आलोचकों ने जिस क्रम में बाणभट्ट की आत्मकथा को रखा है, उसका क्रम तो अपने-अपने मतानुसार बदला जा सकता है, लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' हिन्दी की कालजयी कृति है।

बाणभट्ट की आत्मकथा ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास में द्विवेदीजी ने ऐतिहासिक तथ्यों की अपेक्षा इतिहाससम्मत कल्पना को अधिक महत्त्व दिया है।यह उपन्यास हर्षवर्धनकालीन भारतीय संस्कृति की जीवन्त झाँकी प्रस्तुत करता है। भारतीय इतिहास का यह कालखण्ड सामन्ती संस्कृति का कालखण्ड है। इतिहास को अपने उपन्यासों का उपजीव्य द्विवेदीजी ने यूँ ही नहीं बनाया, इसके पीछे उनकी सुचिन्तित दृष्टि काम कर रही थी। इस दृष्टि का विकास उनके समकालीन सांस्कृतिक, राजनीतिक परिदृश्य में हुआ था। द्विवेदीजी को उपन्यास के शिल्प के भारतीयकरण का श्रेय दिया जाता है। संस्कृत साहित्य में उपन्यास को 'कादम्बरी' कहा जाता है। मराठी में आज भी उपन्यास के लिए 'कादम्बरी' नाम चलता है। आलोचकों ने लक्षित किया है कि द्विवेदीजी के उपन्यास अंग्रेजी के 'नॉवेल' के बजाय संस्कृत की कादम्बरी-परम्परा में आते हैं। आलोचकों ने इसे महज संयोग नहीं माना कि द्विवेदीजी ने कादम्बरीकार बाणभट्ट के जीवन को आधार बनाकर यह उपन्यास लिखा और हर्षवर्धन और बाणभट्ट की रचनाओं से आधार-सामग्री ग्रहण की।

उपन्यास में इतिहास प्रयोग के कारण *बाणभट्ट की आत्मकथा* का नाम ऐतिहासिक उपन्यासों में गिना जाता है, लेकिन द्विवेदी जी के उपन्यास आधुनिक मन के भी दस्तावेज़ हैं। हिन्दी आलोचना के लिए 'बाणभट्ट की आत्मकथा' आरम्भ से ही एक आकर्षक और महत्त्वपूर्ण रचना रही है। अपने कथ्य और भाषा के कारण *बाणभट्ट की आत्मकथा* को भले ही '*गोदान*' और *'मैला आँचल'* जैसी लोकप्रियता न मिली हो, फिर भी हिन्दी आलोचना ने इस उपन्यास को निरन्तर एक चुनौती के रूप में लिया है। इसके प्रकाशन के समय से लेकर अब तक इस पर विचार-विमर्श और लेखन जारी है। हिन्दी उपन्यास की चर्चा हो, टीका-टिप्पणी हो , उसमें ' *बाणभट्ट की आत्मकथा'* का जिक्र न हो, ऐसा देखने में नहीं आता। आज भी '*बाणभट्ट की आत्मकथा'* हिन्दी आलोचना के लिए ऐसा पाठ है, जिसकी व्याख्या, मूल्यांकन और अर्थ-निरूपण पूर्ण नहीं हुआ है। आलोचना के लिए यह चुकी हुई रचना नहीं है, बल्कि आकर्षित और आमन्त्रित करती रचना है। जाहिर है, इस उपन्यास पर बहुत अधिक लिखा गया है, फिर भी अभी बहुत कुछ है, जो अनकहा है, अलक्षित है। इस इकाई में *बाणभट्ट की आत्मकथा* पर लिखी गई आलोचना के साथ-साथ उन पक्षों को भी रेखांकित करने की कोशिश की गई है जो अलक्षित रह गए हैं।

3. *बाणभट्ट की आत्मकथा* का शिल्प : उपन्यास की भारतीयता

'बाणभट्ट की आत्मकथा' ने अपने शिल्प की नवीनता और कथा-भाषा की वजह से हिन्दी आलोचकों का ध्यान खींचा था। जैसे अज्ञेय के उपन्यास *'शेखर : एक जीवनी'* को वस्तुत: उनकी आत्मकथा कहा जाता है, वैसे ही *'बाणभट्ट की आत्मकथा'* को संस्कृत के साहित्यकार बाणभट्ट की जीवनी कहा जाता है। द्विवेदीजी ने इसे बाणभट्ट की प्रामाणिक आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किया है। इसे एक प्रामाणिक आत्मकथा सिद्ध करने के लिए उन्होंने मिस कैथराइन नामक प्राच्यवादी विदुषी के चरित्र का विधान किया है। इस चरित्र को भी उन्होंने वास्तविक चरित्र के रूप में पेश किया है लेकिन द्विवेदीजी की कला से परिचित पाठक शायद ही मिस कैथराइन को वास्तविक मानें। अपने शिल्प और उपन्यास के सन्दर्भ को एक और आयाम देने के लिए उन्होंने मिस कैथराइन की कल्प-सृष्टि की है। यही बात इसे बाणभट्ट की प्रमाणिक आत्मकथा बताने के दावे के बारे में भी सही मानी जा सकती है। द्विवेदीजी ने मिस कैथराइन को ही बाणभट्ट नामक संस्कृत लेखक की आत्मकथा की पाण्डुलिपि खोज निकालने, उसका संस्कृत से हिन्दी अनुवाद करने का श्रेय दिया है। उन्होंने अपनी भूमिका 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को तथ्य-सम्मत बनाने, बाणभट्ट की रचनाओं से मिलाकर प्रामाणिक सिद्ध करने और सम्पादित कर प्रकाशित करने तक ही सीमित मानी है। द्विवेदीजी लिखते हैं, "दो साल तक वह कथा यों ही पड़ी रही। एक दिन मैंने सोचा कि बाणभट्ट के ग्रन्थों से मिलाकर देखा जाए कि कथा कितनी प्रामाणिक है। कथा में ऐसी बहुत सी बातें थीं, जो उन पुस्तकों में नहीं हैं। इनके लिए मैंने समसामयिक पुस्तकों का आश्रय लिया और एक तरह से कथा को एक नए सिरे से सम्पादित किया। आगे जो कथा दी हुई है, वह दीदी का अनुवाद है और फुटनोट में जो पुस्तकों के हवाले दिए हुए हैं वे मेरे हैं (बाणभट्ट की आत्मकथा, कथामुख)।" द्विवेदीजी ने इस उपन्यास को इसलिए अधूरा कहा है ताकि बाणभट्ट की समस्त रचनाओं के अधूरी रह जाने की अनन्य विशेषता या लेखकीय नियति से मिलाकर इसे भी बाण की रचना यानी कि उसकी प्रामाणिक आत्मकथा सिद्ध किया जा सके।

द्विवेदी जी की इन बातों को अभी तक किसी ने भी प्रामाणिक नहीं माना है। इसे केवल लेखकीय कौशल माना गया है। विजयमोहन सिंह ने ठीक ही लिखा है, "स्पष्टत: यह एक 'शिल्प-युक्ति' (डिवाइस) है जिसे द्विवेदीजी ने हिन्दी उपन्यास में

एक नए औपन्यासिक 'रूप' (फॉर्म) या 'संरचना' बनाकर प्रस्तुत किया है।

उन्हें यह भी पता है कि पाठक इसे एक 'युक्ति' ही समझेंगे और उसे एक मौलिक कृति के रूप में ही पढ़ेंगे। किन्तु इसके पीछे एक मन्तव्य या अभिप्राय यह भी है कि उपन्यास को इतनी प्रामाणिकता तथा जीवन्तता के साथ प्रस्तुत किया जाए कि पाठक इस भ्रम की विश्वसनीयता में बिंधा रहे मानो एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ पढ़ रहा हो (हिन्दी उपन्यास की कहानी, पृ.63)।"

हिन्दी में *बाणभट्ट की आत्मकथा* की आलोचना का अधिकांश उसके शिल्प को लेकर है। एक रचना के रूप में 'बाणभट्ट की आत्मकथा' ऐतिहासिक विषय पर आधारित उपन्यास है या आत्मकथा, इसकी ही चर्चा अधिक हुई है। उसकी अन्तर्वस्तु को ज्यादा अहमियत नहीं मिल पाई है। इसका एक प्रतिनिधि प्रमाण चन्द्रकान्त वान्दिवडेकर ने 'हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष' का लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हुए अनजाने ही दे दिया है। वे द्विवेदीजी के औपन्यासिक प्रयोगों पर अधिक बल देते हैं और इसकी सफलता का कारण प्रयोग को देते हैं। वे लिखते हैं, "सूरज का सातवाँ घोड़ा और बाणभट्ट की आत्मकथा को छोड़कर शायद किसी उपन्यास को सशक्त कथा के अभाव में केवल प्रयोग को लेकर पाठकों ने नहीं स्वीकार किया (बीसवीं सदी का हिन्दी साहित्य, सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ.77)।" स्वयं उपन्यासकार ने भी इस कृति को एक 'अभिनव प्रयोग' कहा है - "यदि मेरा अनुमान ठीक है तो साहित्य में यह एक अभिनव प्रयोग है (बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ.199)।" जिस कथ्य के लिए द्विवेदीजी ने यह अभिनव प्रयोग किया है, इतनी साधना की है, उसे भी तो महत्त्व दिया जाना ही चाहिए। चन्द्रकान्त वान्दिवडेकर की स्थापना के विपरीत एक सशक्त कथा, परिवेश, चरित्र, और जीवन-दृष्टि के अभाव में 'बाणभट्ट की आत्मकथा' केवल शिल्पगत प्रयोग की वजह से एक सफल उपन्यास नहीं बन सकता था।

कुछ आलोचक भले ही *बाणभट्ट की आत्मकथा* को केवल शिल्पगत प्रयोग मानते हैं, लेकिन हिन्दी आलोचना में *बाणभट्ट की आत्मकथा* को केवल शिल्पगत प्रयोग से अधिक माना गया है। इस शिल्प के पीछे जो विचारधारा काम कर रही थी, उसे भी महत्त्व दिया गया है। यह प्रयोग महज प्रयोग के लिए प्रयोग नहीं है। इसे उपन्यास के पश्चिमी शिल्प की बजाय उपन्यास के भारतीय शिल्प की खोज के लिए महत्त्वपूर्ण माना गया है। अशोक वाजपेयी ने लिखा है, "उपन्यास भारत में बाहर से आया फॉर्म है। अक्सर कहा जाता रहा है कि उसका अद्वितीय भारतीय रूप नहीं विकसित हो सका है, क्योंकि उसके पश्चिम में बने यथार्थवादी रूप को कोई बड़ी चुनौती हमारे उपन्यासकारों ने नहीं दी। द्विवेदी जी के उपन्यासों का ठीक इस सन्दर्भ में विशेष महत्त्व है। उन्होंने उपन्यास को भारतीय गल्प और किस्सागोई से जोड़ा और उनके यहाँ उपन्यास का रूढ़ यथार्थवादी ढाँचा ढह जाता है (अशोक वाजपेयी का गद्य, सं. यतीन्द्र मिश्र, पृ.274)।" नामवर सिंह, शिवकुमार मिश्र और अशोक वाजपेयी जैसे आलोचकों ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के बहाने द्विवेदीजी को उपन्यास की भारतीयता की खोज का श्रेय दिया है। भारत के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उपन्यास की भारतीयता की इस तलाश का महत्त्व इसलिए भी अधिक हो जाता है क्योंकि, बकौल नामवर सिंह, "अंग्रेजी ढंग के 'नावेल' का तिरस्कार वस्तुत: उपनिवेशवाद का तिरष्कार है (अंग्रेजी ढंग का नावेल और भारतीय उपन्यास, नामवर सिंह, हिन्दी समय डॉट कॉम)।" इस तरह हम देखते हैं कि द्विवेदी जी के लिए उपन्यास की भारतीयता की तलाश महज शिल्प की तलाश नहीं है, बल्कि उपनिवेशवाद का प्रतिरोध भी है। द्विवेदी जी द्वारा उपन्यास के भारतीय रूप की खोज के पीछे आलोचकों ने *बाणभट्ट की आत्मकथा* के रचना-काल की राजनीतिक

परिस्थितियों के बीच से विकसित दृष्टि की भूमिका को लक्षित किया है।

द्विवेदी जी जिस समय यह उपन्यास लिख रहे थे उस समय उपनिवेशवाद से भारत को हर तरह से मुक्त करने की कोशिश की जा रही थी। दूसरे शब्दों में, वह समय स्वाधीनता आन्दोलन का समय था। द्विवेदीजी द्वारा उपन्यास के भारतीय रूप की तलाश उपनिवेशवाद से मुक्ति की एक कोशिश ही थी। इस तरह से द्विवेदीजी उपनिवेशवाद के प्रतिरोध का औपन्यासिक शिल्प बना रहे थे। द्विवेदीजी के शिल्पगत प्रयोग को स्वाधीनता आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में रखकर ही बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। तभी इस प्रयोग के महत्त्व को भी पहचाना जा सकता है। नामवर सिंह ने द्विवेदीजी की उपन्यास-कला को इसी सन्दर्भ में देखा है और उसके उपनिवेशवाद विरोधी महत्त्व को पहचाना है। शायद, इसी वजह से नामवर सिंह ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को 'भारतीय उपन्यास की आत्मकथा' कहा है।

4. *बाणभट्ट की आत्मकथा* की ऐतिहासिकता और सार्वकालिकता

बाणभट्ट एक ऐतिहासिक चरित्र है। वह संस्कृत का एक प्रसिद्ध लेखक था। द्विवेदीजी ने उसके जीवन और रचना-संसार को आधार बनाकर इस उपन्यास की रचना की और उसकी प्रामाणिक आत्मकथा के रूप में इसे प्रस्तुत किया। इसीलिए इसे ऐतिहासिक उपन्यास की श्रेणी में रखा जाता है। इसमें कुछ अनुचित भी नहीं है। लेकिन यह उपन्यास इतिहास की तरह 'ऐतिहासिक' नहीं है। यह कुछ ऐतिहासिक चरित्रों के माध्यम से इतिहास के एक समय विशेष की कथा कहता है। इसमें कथा को इतिहास-सम्मत सिद्ध करने पर बल देने की बजाय कल्पना के माध्यम से एक सांस्कृतिक परिवेश रचा गया है। चन्द्रकान्त वान्दिवडेकर ने ठीक ही लिखा है, "ऐतिहासिक उपन्यास को विलक्षण गरिमा प्रदान की 'बाणभट्ट की आत्मकथा' ने (1946)। यह भी घटनाओं की ऐतिहासिकता पर विशेष बल नहीं देता, बल्कि स्थान और बाणभट्ट, हर्षवर्धन, कृष्णवर्धन, जयंत भट्ट जैसे कुछ ऐतिहासिक चरित्रों को छोड़कर अन्य चरित्र काल्पनिक हैं (बीसवीं सदी का हिन्दी साहित्य, सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ.98)।"

इस उपन्यास को बाणभट्ट की आत्मकथा माना जाए या न माना जाए। इसे जीवनीपरक उपन्यास समझा जाए या आत्मकथात्मक उपन्यास। जो भी हो, आत्मकथा के बारे में प्रसिद्ध यह उक्ति कि वह 'आपबीती' और जगबीती' दोनों होती है, 'बाणभट्ट की आत्मकथा' पर पूरी तरह से लागू होती है। इस दृष्टि से यह उपन्यास बाणभट्ट और उसके समय दोनों को चित्रित करता है, दोनों की कहानी कहता है। रामदरश मिश्र ने ठीक ही लिखा है, "उपन्यास के नाम से ही ज्ञात है कि वह बाणभट्ट की आत्मकथा है। वास्तव में बाणभट्ट की कथा नहीं है, उसके समय की आत्मकथा है। बाणभट्ट आत्मरति प्रधान पात्रों की तरह अपने में डूबकर केवल अपने समय के तथ्यों की या अपनी आन्तरिक दुनिया की कहानी नहीं कहता है, वह तो अपने समय की और उसके माध्यम से शोषक समाज से संघर्ष करते अभिशप्त लोगों की कहानी कहता है (हिन्दी उपन्यास: एक अन्तर्यात्रा, पृ.208)।"

नि:सन्देह *'बाणभट्ट की आत्मकथा'* एक ऐतिहासिक उपन्यास है लेकिन वह ऐतिहासिकता की सीमाओं का अतिक्रमण करके सार्वकालिक रचना का स्थान ग्रहण करता है। इसी कारण उसकी पहचान एक कालजयी उपन्यास के रूप में बनी हुई है। प्रश्न उठता है कि वह कौन-सी रचना-दृष्टि और इतिहास-दृष्टि है, जो इसे एक साथ ऐतिहासिक और सार्वकालिक रचना बनाती है। शिवकुमार मिश्र ने इस प्रश्न की ओर ध्यान दिया है। उनके अनुसार ऐतिहासिक रचना होने पर भी यह एक

सार्वकालिक आकर्षण रखे हुए है, तो इसका कारण द्विवेदी जी की आधुनिक जीवन और रचना-दृष्टि है। वे लिखते हैं, "उनके उपन्यासों की जमीन ऐतिहासिक-सांस्कृतिक है, अतीत के इतिहास के संक्रान्तिकालीन समय से सम्बन्धित, परन्तु, रचना-दृष्टि आधुनिक है। वस्तुत: अतीत के इतिहास तथा संस्कृति का आधुनिक पाठ हैं उनके उपन्यास।... इतिहास तथा संस्कृति के पट पर वे वस्तुत: आधुनिक मन की लिखावट हैं (*हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, पृ.114)*।" शिवदान सिंह चौहान ने इसके लिए ऐतिहासिकता के बावजूद औपन्यासिक मार्मिकता के निर्वाह को कारण माना है। उनके अनुसार, "द्विवेदीजी ने ऐतिहासिकता और औपन्यासिक मार्मिकता दोनों का सफल निर्वाह किया है (*हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष, पृ.64*)।" '*बाणभट्ट की आत्मकथा*' पर विस्तार और गम्भीरता से लिखने वाले विजयमोहन सिंह ने भी उपन्यास की सार्वकालिकता को रेखांकित किया है। उनका जोर उपन्यास की ऐतिहासिकता के बजाय समकालीनता पर है। वे मानते हैं कि इस उपन्यास में समकालीनता और ऐतिहासिकता का अभ्यन्तरण और रूपान्तरण इस प्रकार हुआ है कि इसे ऐतिहासिक उपन्यास माना जाय, यह आवश्यक नहीं है। इसका कारण वे द्विवेदीजी के चिंतन में अन्तर्निहित मानते हैं। वे लिखते हैं, "इसका अभिप्राय यह भी है कि द्विवेदी जी यह भी चाहते हैं कि मनुष्य के मूलभूत सरोकार कालबद्ध या काल-सीमित न रहकर पुन: पुन सामने आते हैं और हर बार उनका नए सिरे से साक्षात्कार और सामना करना पड़ता है।... यही शायद इतिहास या अतीत की प्रासंगिकता और उसकी निरन्तर उपस्थिति भी है (हिन्दी उपन्यास की कहानी, पृ.64)।"

5. *बाणभट्ट की आत्मकथा* की अन्तर्वस्तु और हिन्दी आलोचना

'*बाणभट्ट की आत्मकथा*' के सम्बन्ध में हिन्दी आलोचना की भूमिका की गम्भीरता का पता इसी बात से चलता है कि एक तरफ तो इसे क्लासिक औपन्यासिक उपलब्धि के रूप में स्थापित कर दिया गया और दूसरी तरफ इसके मूल प्रतिपाद्य और कथ्य को लगभग अलक्षित छोड़ दिया गया। हिन्दी के औसत पाठक को शायद ही यह समझ में आता है कि यह एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है, तो क्यों? उपन्यास की अन्तर्वस्तु की व्याख्या और मूल्यांकन के प्रयासों की कमी आज भी खटकती है। आलोचकों ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को प्रेम के इर्द-गिर्द देखने की कोशिश की है। आलोचक प्रेम को प्राथमिक रूप से इसकी अन्तर्वस्तु के रूप में लेते हैं। इसके लिए वे बाणभट्ट और भट्टिनी तथा बाणभट्ट और निउनिया के सम्बन्ध को आधार बनाते हैं। नामवर सिंह और विजयमोहन सिंह ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के प्रेम-तत्त्व पर काफी बल दिया है। उनके विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि वे इस उपन्यास की केन्द्रीय संवेदना या तत्त्व प्रेम को मानते हैं। 'दूसरी परम्परा की खोज' में नामवर सिंह ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को प्रेम-ग्रन्थ सिद्ध किया है। इसके लिए उन्होंने यह दिखाया है कि द्विवेदीजी के लिए 'प्रेम सबसे बड़ा पुरुषार्थ है - प्रेमा पुमर्थो महान।' उनके अनुसार द्विवेदीजी को प्रेम की अवधारणा का ज्ञान भागवत की कृष्ण प्रेमाभक्ति की परम्परा से प्राप्त हुआ था। इस आधार पर उन्होंने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' को न केवल 'प्रेमा पुमर्थो महान' के सिद्धान्त के अनुरूप रचना सिद्ध किया है, बल्कि उसकी प्रेम-संवेदना को भागवत की प्रेमाभक्ति-संवेदना की परम्परा का विकास भी सिद्ध किया है। वे लिखते हैं, "प्रेमाभक्ति की चर्चा में 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की सहायता लेने पर शायद आपत्ति की जा सकती है। इसलिए स्पष्टीकरण के लिए भट्टिनी की इस घोषणा का उल्लेख आवश्यक है कि "मुझे भागवत धर्म में यह पूर्णता दिखा देती है।" इसके अतिरिक्त यह अकारण नहीं है कि इस कथाकृति के सभी प्रमुख चरित्र-

निपुणिका, भट्टिनी, सुचरिता यहाँ तक कि स्वयं बाणभट्ट भी महावराह के उपासक हैं या नारायण के।... इस प्रकार 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की पूरी परिकल्पना ही कृष्णभक्ति की एक निगूढ़ भावना में विन्यस्त की गई है (दूसरी परम्परा की खोज, पृ.62)।"

विजयमोहन सिंह ने प्रेम की अवधारणा के आधार पर '*बाणभट्ट की आत्मकथा*' का मूल्यांकन किया है। दूसरे शब्दों में, उन्होंने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की प्रेम की अवधारणा की आलोचना की है। उनके अनुसार यह कथाकृति 'प्रेम की परस्पर विरोधी दिशाओं का समन्वय' करने का प्रयास करती है। उन्होंने इसे पुरुषों द्वारा प्रेम से वंचित की गई महिलाओं की कथा के रूप में भी पढ़ने की कोशिश की है। उनके अनुसार भट्टिनी, निपुणिका, सुचरिता, मोहिनी सभी स्त्रियाँ पुरुषों से प्रेम माँगती हैं, लेकिन उन्हें 'उपदेश, उपासना, या कारागार' मिलता है। प्रेम के सम्बन्ध में चरित नायक बाणभट्ट के सिद्धान्त और व्यवहार की विजयमोहन सिंह ने कड़ी आलोचना की है। वे लिखते हैं, "वह स्वयं प्रेम करने में अक्षम है। प्रेम के बारे में उसकी व्याख्याएँ अपनी इस अक्षमता को छिपाने वाली शुद्धतावादी व्याख्याएं हैं (आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में प्रेम की परिकल्पना, पृ.340)।"

नामवर सिंह हो या विजयमोहन सिंह, दोनों के प्रेम-विवेचन का अपना-अपना महत्त्व है। उनके विवेचन से इतना तो पता चल ही जाता है कि *'बाणभट्ट की आत्मकथा'* के प्रतिनिधि आलोचक प्रेम को उपन्यास की केन्द्रीय संवेदना या अन्तर्वस्तु मानते हैं और प्रकारान्तर से इसे ही कथा के विकास का कारक भी मानते हैं। उपन्यास की प्रेम संवेदना या अवधारणा को महत्त्व देना न अनुचित है और न ही निराधार। स्वयं द्विवेदीजी ने उपन्यास के 'उपसंहार' में प्रेम की महत्ता पर प्रकाश डाला है, "कादम्बरी में प्रेम की अभिव्यक्ति में एक प्रकार की दृप्त भावना है; परन्तु इस कथा में सर्वत्र प्रेम की व्यंजना गूढ़ और अदृप्त भाव से प्रकट हुई है (*बाणभट्ट की आत्मकथा,* पृ.197)।" लेकिन, किसी रचना की प्रेम-संवेदना को महत्त्व देकर उसके कथ्य को अलक्षित छोड़ देना उचित नहीं है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के साथ यही हुआ है। आलोचना के इस अन्दाज़ की वजह से 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के समग्र मूल्यांकन की आवश्यकता अभी भी बनी हुई है। इस उपन्यास के कई पक्ष हैं जिनकी व्याख्या और आलोचना की अभी भी आवश्यकता है। मसलन, उपन्यास में धर्म और धार्मिक द्वन्द्व का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसी तरह स्त्री-दृष्टि की भी जोरदार वकालत की गई है। इन पक्षों के साथ-साथ उपन्यास की राजनीतिक चेतना तथा उसके सौन्दर्यबोधीय महत्व पर भी हिन्दी आलोचना को और अधिक कहने की जरूरत बनी हुई है। विजयमोहन सिंह ने बाणभट्ट पर राजनीतिक उद्देश्य के लिए भट्टिनी, निपुणिका जैसी स्त्रियों के इस्तेमाल का आरोप लगाया है। वे लिखते हैं, "बाणभट्ट कहता है कि वह नहीं जानता है कि वह किस चीज का निमित्त बनाया जा रहा है, लेकिन इस वक्तव्य के पीछे उसे अच्छी तरह पता है कि निमित्त वह नहीं, वे स्त्रियाँ हैं, जिन्हें वह राजनीतिक शतरंज के मोहरों के रूप में इस्तेमाल करने जा रहा है (*आधुनिक हिन्दी उपन्यास में प्रेम की परिकल्पना, पृ.140*)।" इस कथन को उद्धृत करने का उद्देश्य विजयमोहन सिंह की मान्यता का खण्डन करना नहीं है, बल्कि उस सूत्र के खोज की कोशिश है, जो न केवल कथा के विकास को गति देता है, बल्कि उपन्यास का केन्द्रीय प्रतिपाद्य भी है। विजयमोहन सिंह के इस कथन से स्पष्ट होता है कि पूरा उपन्यास एक राजनीतिक लक्ष्य की ओर समर्पित है। जिसे वे बाणभट्ट का प्रेम की उपेक्षा करके उन स्त्रियों के अपने प्रति

प्रेम का लाभ उठाकर इस्तेमाल करना कहते हैं, वही प्रेम का त्यागपूर्ण रूप है। महत् उद्देश्य के लिए समर्पित। बावजूद इसके कि बाणभट्ट का हृदय प्रेम-शून्य नहीं है, उसका जीवन प्रेम के लिए समर्पित नहीं है। इसी तरह द्विवेदी जी का उपन्यास प्रेम का भी आख्यान है, लेकिन वह प्रेम के प्रति समर्पित उपन्यास नहीं है। वह हर्षवर्धनकालीन भारत की एकता, अखण्डता और विदेशी आक्रान्ताओं से उसकी सुरक्षा के प्रयास के राजनीतिक उद्देश्य के प्रति समर्पित उपन्यास है। राजनीतिक विघटन, एकता का अभाव और आक्रमण की आशंका के माहौल में एक जिम्मेदार नागरिक का प्रेम के प्रति जो व्यवहार हो सकता है, वैसा ही व्यवहार बाणभट्ट करता है। वह प्रेम को पल-पल अनुभव करता है, लेकिन अपने प्रेम को प्राप्त करने के बजाय, वह उस राजनीतिक उद्देश्य को प्राप्त करने में लग जाता है, जो उस परिस्थिति में किसी भी देशप्रेमी का कर्त्तव्य हो जाता है।

भट्टिनी के प्रति भट्ट का समर्पण और लगाव राजनीतिक कारणों से है। भट्टिनी के प्रति वह इसलिए समर्पित है, क्योंकि उसके माध्यम से वह देश का राजनीतिक उद्धार करना चाहता है। एक तरह से भट्टिनी के प्रति उसका समर्पण, उसका राजनीतिक लक्ष्य के ही प्रति समर्पण है। दोनों के सम्बन्ध पर कुमार कृष्णवर्धन का यह कथन पर्याप्त प्रभाव डालता है, "तुम्हें देव-पुत्री नन्दिनी की सेवा इसलिए नहीं करनी है कि देव-पुत्री नन्दिनी तुम्हारी दृष्टि में पूज्य और सेव्य हैं, बल्कि इसलिए कि उनकी सेवा द्वारा तुम लोक का आत्यन्तिक कल्याण करने जा रहे हो। कुमार का यह कथन भट्ट के लिए सलाह या उपदेश नहीं है बल्कि उसके संकल्प की अभिव्यक्ति मात्र है (*बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ.82*)।" बाणभट्ट के चरित्र में कर्त्तव्यबोध और दायित्वबोध दोनों है, जिसके लिए वह प्रेम को अपने ढंग से जीता है।

6. निष्कर्ष

हिन्दी आलोचना में *'बाणभट्ट की आत्मकथा'* को राजनीतिक उपन्यास के रूप में पढ़ने की परम्परा नहीं रही है, लेकिन यह मूलत: एक राजनीतिक उपन्यास है। उपन्यास में हर्षवर्द्धनकालीन भारत की चंचल और कुटिल राजनीति अपनी सभी विशेषताओं के साथ व्यक्त हुई है। एक मानवीय और जनतान्त्रिक राजनीतिक व्यवस्था उपन्यास की केन्द्रीय चिन्ता है। बाकी सब चिन्ताएँ इसी में विलीन हो जाती हैं। उपन्यास की पूरी कथा राजनीतिक घटना-क्रमों में गुँथी हुई है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की शुरुआत भले ही अराजनीतिक लगती है, लेकिन जल्दी ही पूरी कथा राजनीतिक परिवेश में समाहित हो जाती है। कवि बाण जो आरम्भ में एक अराजनीतिक व्यक्ति था, वह जिस उद्देश्य को पाना चाहता है, वह राजनीतिक है। इसलिए वह स्वयं न केवल राजनीति में उलझ जाता है, बल्कि निष्णात भी हो जाता है। वह किस हद तक राजनीति में उलझ चुका था इसका पता उसके इस कथन से मिलता है, "राजनीति की कुटिल भुजंगी ने मुझे डँस लिया है, मेरा बचना अब असम्भव है (*बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ.181*)।"

उपन्यास की राजनीतिक चेतना बहुत प्रखर है। विभिन्न पात्रों के माध्यम से और घटनाक्रमों की दिशा से यह स्पष्ट होता है कि उपन्यासकार को राजनीति की गहरी समझ है। भट्ट के लिए कुमार कृष्णवर्धन का यह कथन राजनीति के स्वभाव पर एक सार्थक टिप्पणी है: "राजनीति भुजंग से भी अधिक कुटिल है, असिधारा से भी अधिक दुर्गम है, विद्युतशिखा से अधिक चंचल है (*बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ.81*)।"

कुमार कृष्णवर्धन का ही एक और कथन है जो राजनीति की संस्कृति को प्रकट करता है - "अपराधियों के अपराध का दण्ड नहीं मिलता, सो राजनीति की जटिलता के कारण हुआ है (बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ.55)।" राजनीति के स्वभाव और उसकी संस्कृति की यह समझ प्राचीन राजतन्त्र और आधुनिक लोकतन्त्र दोनों के संयुक्त अनुभव से विकसित हुई है। स्पष्टतः उपन्यास में अभिव्यक्त यह अनुभव उपन्यासकार का अपना है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के आधार पर यह आसानी से पता लगाया जा सकता है कि द्विवेदी जी राजनीति के प्रति कितने जागरूक थे; और, मनसा-वाचा उसके कितने निकट भी। द्विवेदी जी के लिए राजनीति का क्या महत्त्व था इसका पता अब्दुल बिस्मिल्लाह के एक संस्मरण से चलता है। अब्दुल बिस्मिल्लाह ने लिखा है कि एक बार जब द्विवेदीजी से कविता पर चर्चा करनी चाही तो उन्होंने यह कहकर टाल दिया कि, "वैसे भी इन दिनों कविता की बात नहीं की जा सकती।... चार जून को लखनऊ में दंगल हो रहा है। मुख्यमन्त्री के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पेश होने जा रहा है। ऐसी स्थिति में हम कविता पर बात करेंगे? (हजारीप्रसाद द्विवेदी : चिन्तन और व्यतित्व, सं. कृपाशंकर चौबे, पृ.196)।"

राजनीतिक रूप से अखण्ड न होते हुए भी 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में जिस समाज का चित्रण किया गया है वह राजनीतिक रूप से पूर्णत: सचेत समाज है। बाणभट्ट के माध्यम से द्विवेदीजी ने एकता और अखण्डता की इसी कमी की पूर्ति की साधना की है। इसलिए इस उपन्यास को एक राजनीतिक उपन्यास के रूप में भी पढ़ा जाना चाहिए।

A Gateway to All Post Graduate Courses